# शोकगीत

कुणाल सिंह

हिन्दी ADDA

# शोकगीत

https://www.hindiadda.com/shokageet/

दृश्य के पच्छिमी सीमाने एक साथ ढेर सारी साँझ जमा हो गई थी। लंबी-चौड़ी सड़कें, बुसी हुईं मूर्तियाँ, स्ट्रीट पोस्ट और ऊँची मेहराबों वाली प्राचीनता का कुहरीला स्वाद लिए उलँग इमारतें जैसे पीले फ्रॉक और बाबासूट पहिनकर सँझिया के सैर-सपाटे को निकली हों। टुकड़ा आसमान में सूरज कहीं नहीं था, लेकिन हवा में सूरज के बुझे हुए ठंडे चूरे तिर रहे थे। पेड़ों के धुएँले हरे पर पीले का रोंगन चढ़ा था, जैसे देखने वाले ने अपनी आँखों पर पीले काँच के चश्मे मढ़ा रखे हों। पता नहीं क्यों इन कुछ क्षणों चारों तरफ पीले भूरे व धूसर की विस्तीर्ण और हताश दूरियों के बीच मन किन्हीं अपरिचित उदासियों में डूबने लगता है। न जाने कैसी एक कुदरती चीज की कमी गले में फाँस की तरह बार-बार हूक उठाती सालने लगती है। मुँह अधूरेपन के फेनिल स्वाद से भर-भर जाता है।

"क्या तुमने जैक लंडन को पढ़ा है?" यह मेंहदीरत्ता था। धूपछाँही चश्मे के उस पार उसकी मिचमिचाती आँखें थीं, बियर की बोतलें थीं, विक्टोरिया मेमोरियल के सामने खुला मैदान था जहाँ हम बैठे थे, हवा थी, हवा में शाम के झुटपुटे गर्द थे जिनकी आड़ में हम बियर पी रहे थे और यह मैं था। बियर के तांबई नशे में हम यों थे कि एक झटके में यह साफ-साफ पकड़ पाना मुश्किल था कि हम किस तरफ थे। कि हम एक आसानी से मुस्करा सकते थे और उतनी ही आसानी से रो सकते थे। हँसने और रोने के बीच के बीहड़ कँटीले रास्ते गायब हो गए थे और दुनिया में जो भी था बहुत सहज था। हवा में अब भी मेंहदीरत्ता का सवाल खड़खड़ा रहा था जिसका मुझे जवाब देना था और मैं चुपचाप सिगरेट फूँक रहा था। मेंहदीरत्ता अब तक मुझे घूरे जा रहा था। एक पल के लिए लगा कि यदि मैं इसी तरह बिला हरकत बैठा रहूँ तो वह सदियों तक घूरता चला जाएगा। एक जरा सी हरकत उसके लिए काफी होगी, सोचकर मैंने सिगरेट के दो छल्ले बनाए और मुस्कराता हुआ चश्मे के पार उसकी आँखों को देखने लगा। पता नहीं उसने क्या समझा, लेकिन इतने भर से वह आश्वस्त हो गया। मुझे लगा, अबकी वह पूछेगा क्या मैंने निर्मल वर्मा या मिलान कुंदेरा को पढ़ा है!

बियर की अंतिम बूँदें हलक से उतारने के बाद हमें लग रहा था कि एक-दूसरे से पूछने और बताने के लिए हमारे पास बहुत कुछ है। हम किसी भी सवाल का कोई भी जवाब दे सकते थे। कुछ भी मायने नहीं रखता। हम एक बहाव में थे और शब्द अपनी न्यूनतम उत्तेजना के ताप में बिहस रहे थे। कुछ इस हद तक कि शब्दों पर से स्वाद की परतें उखड़ गई थीं। बोलने के नैरंतर्य में भी शब्दों के टुकड़े एक-दूसरे से जुदा और

संपूर्ण थे। यद्यपि पीने के बाद मैं अपने आपको थोड़ा संयत रखने की कोशिश करता हूँ। कुछ भी कहते हुए जैसे किसी ऊँची तार पर चल रहा हूँ। मेंहदीरत्ता अक्सर बहक जाता है। एक उतावली बड़बड़ उसे घेर लेती है।

आज यह ग्यारहवाँ दिन है। बिना कोई ठोस वजह बताए एक साथ तीन महीने का वेतन देकर नौकरी से हमारी छुट्टी कर दी गई थी। तब से हम खाली हैं। हमारे साथ बीस लोग और थे। बाकी के लोग फिलहाल कहाँ क्या कर रहे हैं, हमें पता नहीं। मैं और मेंहदीरत्ता पहले की तरह ही घर से ऐन साढ़े नौ बजे निकलकर किसी तयशुदा जगह पर मिलते हैं और तब शुरू होती है हमारी अंतहीन भटकन। एक जगह से दूसरी जगह, दूसरी से फिर तीसरी। दोपहर में कहीं बैठकर अपना-अपना लंचबॉक्स निकालकर खा लेते हैं और शाम को घर लौटते हुए कुछ इस तरह दिखने का प्रयास करते हैं मानो दिन भर के काम ने हमें बुरी तरह थका दिया है। मेरे परिवार के लोग बिहार में रहते हैं। बेहाला के फ्लैट में मैं अकेले ही रहता आया हूँ, सो मेरी कोई खास दिक्कत नहीं है। लेकिन मेंहदीरत्ता ने अभी तक अपने घर में कुछ नहीं बताया। उसे पूरी उम्मीद है कि जब तक जेब पूरी तरह खाली नहीं हो जाती, कोई न कोई नौकरी वह तलाश ही लेगा। अपने जाने वह भरपूर प्रयास भी कर रहा है, लेकिन एक नौकरी के रहते ही कोई दूसरी नौकरी खोज लेना जितना आसान होता है, उतना नौकरी के छूट जाने के बाद नहीं रह जाता। मुश्किल यह है कि किसी जान-पहिचान वाले से इस बाबत वह कुछ कह भी नहीं सकता। भेद खुल जाने का डर है।

'अब हम बेकार हैं' - उदासियों में लिपटा हुआ यह एक ऐसा सच था जिसे हम इतनी जल्दी स्वीकार नहीं करना चाहते। एक अच्छे-भले नौकरीपेशा होने की जो गर्मी होती है, वह हममें अभी चुकी नहीं थी। यद्यपि उस नौकरी को वापस पाने का कोई सवाल नहीं था, लेकिन हमें किसी दूसरी नौकरी की उम्मीद थी। बीच के इन कुछ दिनों के लिए यह नया-नया आवारापन था, कुछ पैसे थे, घरों में झूठ बोलने और निभाने का खट्टा-मीठा स्वाद था, भरपूर जवानी थी और शहर में भरी पड़ी लड़कियाँ थीं। कितनी एक मजेदार बात है कि इन लड़कियों को पता नहीं था कि हमसे हमारी नौकरियाँ छीन ली गई हैं। हम बेखटके उन्हें देखकर मुस्करा सकते हैं, उनके लिए सीटियाँ बजा सकते हैं, फिकरे कस सकते हैं और एकाध से नजरें मिल जाने पर आँख भी मार सकते हैं। मेंहदीरत्ता की आवाज अच्छी है। वह गाता है - 'पतली कमर चिकना बदन तिरछी नजर है, मस्ती भरी तेरी बाली उमर है!' मैं चिल्लाता हूँ - 'जुम्मा चुम्मा दे दे...!'

एक दिन हम बाल-बाल बचे। एल्गिन रोड की घटना है। फ्लाई-ओवर बन रहा था। सड़क के किनारे डामर के टिन, बड़े-बड़े रोलर, लोहे के गार्डर, बीम, रॉड, बालू की

बोरियाँ आदि जमाकर रखी गई थीं। वहीं कहीं काली बजरी की एक ढेर पर हम बैठे थे। चारों तरफ धूल और शोर। कुछ देर पहले हमारे बीच पेरिजाद जोराबियन और राहुल बोस के बारे में बातें हुई थीं और फिलहाल हम चुप थे। इतने में ऐन हमारे सामने से एक लड़की गुजरी। बजरी की जिस ढेर पर हम बैठे थे, उसके आगे कीचड़ था। वह लड़की एक हाथ से नाक पर रूमाल रखे और दूसरे से अपनी साड़ी को हल्के सँभाले कीचड़ से बचती हुई निकल रही थी। उसकी पिंडलियाँ गोरी और खूबसूरत थीं। पहिचान की एक लहर-सी दिमाग में झनझनाई। उसे ठीक से चीन्हने के लिए मैंने निगाहें उठाईं, मगर आँखें उसकी देह पर किसी एक जगह स्थिर नहीं रह पाईं। एकदम आखिरी पल, जब वह लगभग नाक की सीध में थी, मेरी स्मृति ने गफलत के उथले गड्ढे से छलाँग लगाई। यह तो लिपि है। हाँ, वही है। मैंने नजरें घुमा लेनी चाहीं, मगर उन पर मेरा वश न था। उसने मुझे नहीं देखा। वह चली जा रही थी। "यदि उसने हमें यहाँ इस तरह बेमतलब बैठे देख लिया होता तो?" मैंने मेंहदीरत्ता से पूछा। उसने हँसकर कहा, "कह देते कि हम फ्लाई-ओवर बनाना सीख रहे हैं और यह आटा गूँथने की तरह एक आसान काम है।"

"सुनो, मजाक की बात नहीं है यह।" मैंने उसे झिड़का। "आखिर हमें इस तरह भी तो एक बार सोचकर देख लेना होगा कि यदि उसने हमें देख लिया होता तो?"

लिपि मेरी प्रमिका थी, जिसके साथ आगामी मार्च की किसी तारीख को मेरी शादी होने वाली थी। बड़ी मुश्किल से उसके घरवालों ने यह शादी मंजूर की थी। ऐसे में यदि उन्हें किसी तरह पता चल जाए कि मेरी नौकरी नहीं रही तो तय है कि वे उसकी शादी कहीं और कर देंगे। दुनिया में न जाने कितना लड़के बेरोजगार हैं। यह दूसरी बात है। नौकरी नहीं मिलने और नौकरी छिन जाने में वही अंतर है जो एक कुँवारी लड़की और विधवा औरत में होता है। चाहे जो भी वजह रही हो, लोग तो यही सोचेंगे कि लड़का नाकाबिल था, तभी उसकी नौकरी छीन ली गई होगी। लोग कहें या न कहें, लिपि के घरवाले ऐसा ही कुछ सोचेंगे। उन्हें मुझ पर पहले से ही कम भरोसा है। असलियत तो यह थी कि यही सब सोचकर मैं डर गया था। मैंने मेंहदीरत्ता के कंधे पर अपना हाथ रख दिया। ठंडे स्वर में पूछा, "आखिर कब तक? आज यह ग्यारहवाँ दिन है - तुम्हें पता है? मैं पूछता हूँ आखिर कब तक हम यों ही भटकते और अपनों से छिपते फिरेंगे?"

इस सवाल का जवाब मेंहदीरत्ता क्या देता! वह चुप ही रहा। एक फीकी उदासी उसके चेहरे पर तारी हो गई। इसके बाद हम काफी देर तक चुपचाप बैठे रहे। शाम होने से पहले घर जाने के लिए उठा तो मेंहदीरत्ता ने मेरी कलाई पकड़ ली, मानो मेरे जाने के बाद वह अकेला पड़ जाएगा। मैंने उससे कहा कि अब घर लौटने का वक्त हो चला है।

चलो, आज का दिन बीत गया। लेकिन वह बैठा रहा - निश्चल। उसका मन रखने के लिए मैं फिर से बैठ गया। कुछ देर बाद हम उठे और थोड़ी देर इधर-उधर घूमने के बाद चार बोतल बियर खरीदकर विक्टोरिया के सामने वाले मैदान में आ बैठे। मेंहदीरत्ता ने हँसते हुए कहा, आज वह घर पर कह देगा कि ओवर-टाइम करके आया है।

सर्दियों में कभी-कभी सुबह-सुबह ही आसमान का ढक्कन खुल जाता है और चारों तरफ धूप फैल जाती है। जैसे जाड़े में ठिठुरते कलकत्ते की सुबह-सुबहिया सिहरनों को किन्हीं अदृश्य हाथों ने सूरज के पानी से धो-चमकाकर सूखने के लिए टाँग दिया हो। इस धूप को देखकर मुझे लगता है कि दुनिया के दिन अब फिरने वाले हैं। कुछ अच्छा-सा होने वाला है - जरूर जरूर!

नींद के चुकने के बाद भी मैं देर तक बिस्तरे में पड़ा रहा। फिर उठकर बैठ गया। जंगले से होकर धूप का धारीदार चकत्ता रजाई पर पड़ रहा था। धूप में कई नन्हे-नन्हे गुलाबी नीले रेशे नाच रहे थे। मैंने घड़ी देखी। साढ़े सात बज चुके थे और अब बिस्तर से निकलना होगा। उठकर जंगले के पास आया। नीचे सड़क के किनारे चाय-नाश्ते की एक टिपरिया होटल थी। ऊपर से ही आवाज लगा दी। चायवाली औरत जब तक अपने लड़के को ऊपर भेजती, मैं जंगले से हटा नहीं। यह लगभग रोज का नियम था।

इतने में फोन घनघनाया। फोन पुराने मॉडल का था, जिसमें उँगली घुमाकर नंबर डायल किया जाता था। साइकिल की घंटी से मिलता-जुलता इसका रिंगटोन था। लिपि कई बार टोक चुकी थी कि इसे बदलवाकर कोई नया मॉडल ले आऊँ।

"हलो?"

"गुडमॉर्निंग सर! उठ गए आप?" दूसरी तरफ लिपि थी।

"क्यों मेरी सुबह खराब कर दी तुमने?"

"अब तो तुम्हारी हर सुबह खराब होगी मिस्टर। शादी जो..."

"चलो कम से कम रातें तो गुलजार होंगी!"

"खैर सुनो, आज का क्या प्रोग्राम है तुम्हारा? घर आ जाओ, इलिश माछ बनाने की सोच रही हूँ।"

"हाँ-हाँ, और कोई काम-धाम नहीं है जैसे! इलिश खाने आऊँगा तो दफ्तर का क्या होगा?" मैंने बात बनाई। मुझे खुशी हुई कि मैं आसानी से झूठ बोल गया।

"वाह रे, आज भी तुम्हारा दफ्तर खुला है! आज संडे है जो..."

लगा उसने मुझे कसकर तमाचा मार दिया हो। जब से नौकरी छूटी है, क्या संडे और क्या मंडे - सब दिन होत एक समान! इस बाबत तो कभी ध्यान ही नहीं दिया। क्या मैं पिछले संडे को भी दफ्तर गया था?

"क्या हुआ? यही तुममें खराबी है। बोलते-बोलते क्या सोचने लगे?"

"आ जाओ तुम्हीं यहाँ। यहीं जो बनाना है बनाओ।"

"मैं ही आऊँ? ठीक है, सी यू देन!"

"ऐट?"

"अं... अप्रॉक्स नाइन थर्टी?"

"ओके। बाई!"

आज से तीन साल पहले जब मैं एक कूरियर कंपनी में था, एक दुबली-पतली लड़की नारू दा के साथ अक्सर देखी जाती। दूर के रिश्ते में वह उनकी बहन लगती थी, हालाँकि शुरू-शुरू में मैंने उसे नारू दा की प्रेमिका समझा था। नारू दा ने बताया कि लड़की के घरवाले सिलीगुड़ी में रहते हैं। उसकी यहाँ नई-नई नौकरी लगी है टेलीफोन विभाग में। लड़की का स्वास्थ्य हरदम खराब रहता था। कभी कुछ तो कभी कुछ। सर्दियों में वह ठिठुरती और नाक सिनकती रहती थी। और तो विशेष कुछ याद नहीं, लेकिन यह कि वह हमेशा सस्ती कलमों का इस्तेमाल करती जिसकी वजह से उसके दाएँ हाथ की तर्जनी और अँगूठे में नीली स्याही पुती होती। सड़कों पर चलते हुए वह कोई न कोई किताब अपने हाथों में दबाए रखती और जब जरा सी फुर्सत मिलती, दो-चार पन्ने पढ़ लेती। इस तरह मैं कभी नहीं पढ़ पाता। पढ़ने के लिए मुझे घर का सुरक्षित कोना और इफरात में समय चाहिए होता है। मुझे वह लड़की कुछ उन आदमियों की तरह लगती जो जरा सी मुहलत पाते ही एक झपकी ले लेते हैं, फिर फौरन नींद से पल्ला झाड़कर चकमक खड़े हो जाते हैं। मैं हमेशा आश्चर्य करता कि फुटकरों में भी नींद बटोरी जा सकती है भला!

"हलो... हलो मेंहदीरत्ता?"

"कौन कुणाल? ...हाँ क्या बात है?"

"अरे यार, आज संडे है।"

"हाँ तो फिर?"

"फिर क्या, सोचा तुम्हें बता दूँ। मैं आज नहीं आ रहा। आज संडे है।"

"मालूम है यार ...और सब ठीक-ठाक?"

"तुझे याद था तो फिर कल क्यों नहीं बताया मुझे? यदि सुबह लिपि से बात नहीं होती तो मैं निकल पड़ता न दफ्तर!"

"ओ, तुझे याद नहीं था क्या? ...ठीक है फिर, कल मिलते हैं।"

"कहाँ? चैप्लिन के पास न?"

"हाँ-हाँ, वहीं।"

"क्या बात है? खुलके बात क्यों नहीं कर रहा? कोई आसपास है क्या तुम्हारे?"

"अं... हाँ!"

"ओके देन। बाई।"

"बाई।"

नारू दा ने एक दिन उस लड़की से मेरा परिचय करवाया - इंद्रलिपि चैटर्जी। बाद में हम बराबर मिलने लगे। कभी-कभी वह बहुत बोर करती। साहित्य में उसकी खूब रुचि थी। मैंने बांग्ला साहित्य नहीं पढ़ा - यह जानकर उसे घोर आश्चर्य व दुख हुआ था। "तुम्हें पढ़ना चाहिए। खासकर नवारुण भट्टाचार्य को। वे बहुत जरूरी हैं।" उसने हिदायत दी थी। मैंने एक कान से सुनकर दूसरे से निकाल दिया। तब कभी नहीं सोचा था कि एक दिन इसी लड़की से शादी तय हो जाएगी। उसके पिता फौज से रिटायर हुए थे। चाहते थे कि उनकी लड़की किसी फौजी की ही बीवी बने। एक दिन लिपि ने बताया कि उन्होंने उसके लिए कोई लड़का खोज रखा है जो फिलहाल लेफ्टिनेंट है। जल्द ही उसका प्रोमोशन हो जाएगा। तब वे उसकी शादी की बात चलाएँगे। मैंने जब उसे कांग्रेचुलेट करना चाहा तो उसने हिंट दिया, "बट आई हेट देम। मुझे अपनी माँ की तरह किसी फौजी की बीवी नहीं बनना। फौजी मुझे पसंद नहीं।" उसने जिस तरह से यह कहा था, मुझे हँसी आ गई। मैं हँसता चला गया। लिपि ने समझा कि मैं उसका

मजाक उड़ा रहा हूँ। वह सिसकने लगी। चेतकर जब मैंने उसे मनाना चाहा, वह तमककर चली गई। दो-तीन दिन उसका कोई पता न रहा। मुझे अफसोस था कि अनजाने में उसे ठेस पहुँचाई है। नारू दा से उसका सेल नंबर लेकर रिंग किया। उसने कहा कि उसे यकीन था कि मैं फोन करूँगा। "वो कैसे?" मेरे इस सवाल के जवाब में उसने कहा, "आई लव यू!"

अपने बेवकूफ दिनों में जब मैने उसे पहली बार चूमा था, वह गहरे तक थर्रा गई थी। लगा, जैसे समुद्र की पीठ पर आग उगलने लगा था आकाश और पृथ्वी उतनी नीली थी कि ठंडे कबूतर उड़ते थे। शुरू-शुरू में जब-जब हम मिलते, चुप हो जाते, जैसे भाषा की आँच से अपने कुँवारेपन की देह को अभी कुछ दिन और के लिए बचा लेना चाहते हों। आईने में मिलने वाला हमारा चेहरा जैसे समय के नए और द्वितीय शिल्प में अभी-अभी जनमा - पवित्र और अनगढ़।

पहली बार उसकी देह के कोने-अँतरों में डूबते हुए लगा था कि धीरे-धीरे ईश्वर का तिलिस्म छँट रहा है दृश्य से। पानी के अँधेरे से उबरकर मैं दिन के उजास को देखता हूँ। उसके चेहरे पर यातना की एक लकीर खिंच आई है और आँसुओं में चाँद-सी पीली मुस्कराहट है। उसकी गरदन से उतरती नीली नसों पर जीभ की गर्म नोंक रखता हूँ और महसूस करता हूँ हवा और धूप और अप्रैल के सूखे तिनके की गंध के परे साबुन की फेनिल महक। आँखें मुँदने लगती हैं जैसे बुखार में और खुलती जाती हैं अंग-अंग की गाँठें।

वहाँ प्यास, प्यास है और पानी, पानी।

वह झेंप गई और मेरी देह की सतह से भाप उठने लगी थी।

लिफ्ट से उतरते हुए हम खामोश रहे मानो लिफ्ट के चलते रहने में हमारी एक जरा सी आवाज बाधक बन सकती है। 'कॉन्सेप्ट थ्री' वालों ने हमें इंटरव्यू के लिए कॉल किया था। यहाँ आते हुए हमारी आस्तीनें उम्मीदों से धुआँई हुई थीं। अब लिफ्ट से उतरते हुए हम लुटे-पिटे खामोश थे। लिफ्ट में झिरी अँधेरा था और लिफ्ट चलने की मंथर आवाजें थीं। हमारे साथ चार लोग और थे। जाने क्यों हम सब एक-दूसरे से शर्मसार थे। सभी जल्दी से जल्दी नीचे उतरकर अपने-अपने ब्लैकहोल में गायब हो जाना चाहते थे कि दुबारा एक-दूसरे का सामना न हो। लिफ्ट की दीवार पर एक अश्लील फिकरा लिखा हुआ था, जिसे किसी मनचले ने किन्हीं सुखद दिनों में लिखा होगा। मैंने बाकी लोगों की तरफ देखा कि वे उस फिकरे को देख रहे हैं या नहीं। सब चुपचाप

अपने-अपने खयालों में डूबे हुए थे। हमें भी क्या पता कि हमारी जिंदगियाँ किन खयालों में खोई हुई हैं। मन ही मन मैं गुनगुना रहा था - मुझको भी तो लिफ्ट करा दे!

'कॉन्सेप्ट थ्री' से निकलकर हम चलते हुए आधे घंटे में 'फोरम' तक पहुँच गए। नौकरी के रोंयेदार गर्म दिनों में हम अक्सर इस मल्टीप्लेक्स में आते थे। चारों तरफ चमाचम चमकती दुकानें, कॉफी बार, म्यूजिक गैलरीज, शॉपिंग मॉल्स, गार्मेंट शोरूम्स, आइनॉक्स और लड़कियाँ। हर बार की तरह इस बार भी हमने काफी मेहनत से अपने लिए दो लड़कियाँ तलाश लीं। लड़कियों को तलाशते हुए हमारे कुछ सिद्धांत थे। अव्वल तो हम उन्हीं लड़कियों के पीछे लगते थे जो दिखने में भले मॉडर्न लगें, लेकिन हों मध्यवर्गी। यह काफी अनुभवी आँखें ही पहिचान पाती हैं, क्योंकि यहाँ हर लड़की अपने पहनावे और दिखावे में एकबारगी किसी लखपति घर की बिगड़ैल लड़की दिखती है। लेकिन थोड़ा 'वाच' करते रहने से उसकी ठसक और देह की लोच के महीन सिरे उसके मध्यवर्गी होने की पोल खोल देते हैं। कुछ और भी 'साइन' हैं इस तरह की लड़कियों की, मसलन वे साधारणतया दो या तीन की झुंड में पाई जाती हैं और इन्हें घूम-फिरकर किसी गारमेंट शोरूम में ही देखा जाता है, जहाँ रियायती दरों पर कपड़े उपलब्ध होते हों। ऐसी लड़कियाँ महज घूमने-फिरने की गरज से यहाँ नहीं आतीं, इसलिए वे कहीं भी फिजूल वक्त बिताना पसंद नहीं करतीं। एक-एक सेकेंड का सदुपयोग करना चाहती हैं। इस तरह अपने 'टाइप' की लड़कियों को एक बार खोज लेने के बाद थोड़ी देर तक हम उनको 'फॉलो' करते हैं, यह देखने के लिए कि आसपास कहीं उनका कोई ब्वॉयफ्रेंड तो नहीं। पूरी तरह से आश्वस्त हो लेने के बाद ही हम उन लड़कियों को दिखना शुरू करते हैं। 'दिखना' मतलब सायास ऐसा कुछ करें कि उन्हें लग जाए कि ये लड़के हमारा पीछा कर रहे हैं। वे जिन-जिन दुकानों में जाएँ, पीछे-पीछे हम भी हो लें। लगभग दस मिनटों के इस 'दिखने' के बाद हम उनसे मुखातिब होते हैं।

उनके साथ 'इंटरऐक्शन' की शुरुआत के भी हमारे कुछ नियम हैं। मसलन अगर लड़की दो हुईं तो बातचीत की शुरुआत उस लड़की से की जाए जो अपेक्षाकृत कम सुंदर हो। बातचीत भी महज शुरुआती, जैसे 'कितने बजे होंगे?' या 'आज बहुत सर्दी है' या 'क्या आप बता सकती हैं कि पोर्टिको नाइंटीन किस तरफ पड़ता है?' इत्यादि। बातचीत के दौरान हम पूरी तरह से अपेक्षाकृत कम सुंदर लड़की पर ही ध्यान देते हैं और दूसरी लड़की की अवहेलना करते हैं। फिर बातचीत का हमारा रवैया भी बड़ा 'कैजुअॅल' और 'कूल' होता है, जैसे हमारी तो आपमें कोई रुचि नहीं देवियो, हम तो मजबूरी में ही आपके मुँह लग रहे हैं और कभी भी फूट ले सकते हैं। हालाँकि वे जानती

हैं कि ये हम ही हैं जो पिछले दस मिनटों से उनके पीछे पड़े हैं। सौ में से अस्सी लड़कियाँ ये जानने के बाद भी 'इनोसेंट' बनती हैं और हमारी किसी ठोस पहल का इंतजार करती हैं। वे सोचती हैं कि हम उनके साथ कुछ असभ्यता करें तो वे शोरगुल करेंगी। लेकिन इसके विपरीत जब हम नितांत भद्रतावश पेश आते हैं तो उन्हें लगता है कि ये महज संयोग था कि हम उन्हें पिछले दस मिनटों से दिख रहे हैं। उनके मन में एक अपराधबोध घर कर जाता है कि उन्होंने नाहक ही हमें गलत समझा था। उनकी इस भावना का फायदा उठाते हुए ऐन इसी वक्त उनसे हम अपने 'परिचय सत्र' का शुभारंभ करते हैं।

उदाहरण के लिए आइए उन दोनों लड़कियों के पास चलते हैं जिन्हें आज के लिए हमने चुन रखा है। लेकिन एक मिनट ठहरिए, मेंहदीरत्ता उनके पैरों की ओर आपका ध्यान दिलाना चाहता है। अब देखिए, उनमें जो लड़की दाईं तरफ खड़ी है - वो नीली जींस वाली। हाँ-हाँ, जिसने अपनी नाभि में छल्ला डाल रखा है, उसके पैरों पर गौर फरमाएँ जरा। मुझे कहने दो मेंहदीरत्ता, मुझे लगता है मैं इसे बेहतर कह सकता हूँ। हाँ तो सुनिए, मेरा खयाल है कि पैर बड़े चुगलखोर होते हैं। अक्सर हाथों की निस्बत बहुत कम सुसंस्कृत होते हैं पैर। जबकि हाथ नई सभ्यता को पूरी तरह अपना चुके होते हैं, पैरों में अब भी पुरानी सभ्यता की बिवाइयाँ घिसट रही होती हैं। ठीक कहा आपने, आधुनिक हाथों की पोल खोलते हुए मैलछहूँ पैर बता जाते हैं कि रंग-बिरंगी हवा में तैरते हाथों की जड़ें कितने कीचड़ में धँसी हैं। मैं इसके ये पैर, हाँ साहब सिर्फ पैर देखकर दावे के साथ कह सकता हूँ कि ये लड़की बड़ा बाजार की तरफ कहीं रहती होगी। मूलतः यूपी की होगी, बलिया साइड की। यकीन न हो तो पूछ देखिए उससे। बंगाली तो हो ही नहीं सकती। अरे, शायद आप मेरे बड़बोलेपन से बोर हो रहे हैं। या शायद जल्दी से जल्दी उन लड़कियों से 'इंट्रो' करना चाहते हैं। जनाब इस 'फील्ड' में यह उतावली ठीक नहीं। सेकेंड भर की जल्दीबाजी भी खतरनाक साबित हो सकती है। पूछिए इस मेंहदीरत्ता से कि कैसे एक बार गोर्की सदन में पिटने से बचा था। और मेरी मानिए तो दूर ही रहिए इन बलाओं से। अरे, हमारी तो नौकरियाँ नहीं रहीं और रोजाना आठ घंटे बाहर बिताने की बंदिशें हैं, वरना हम क्या शक्ल से पागल दिखते हैं! छोड़िए, चलिए कहीं बैठकर कॉफी पीते हैं। बेशक पैसे आपके जाएँगे। हमारी इतनी कहाँ औकात कि मल्टीप्लेक्स में बैठ कर बाइस रुपये की एक कॉफी पिएँ। और कुछ फुटकर मिलाकर बियर की एक कैन नहीं ले लेंगे बाहर जाकर! क्या कहा, बाहर ही चलें? अरे, हमारा तो विचार था कि आप हमें आइनॉक्स में 'मॉर्निंग रागा' भी दिखलाएँगे। सुना है बड़ी अच्छी फिल्म है। वो क्या कहते हैं, स्मॉल बजट मूवी। लेकिन इन्हें देखने के लिए लोगों के पास बिग बजट होना चाहिए साहब। साली डेढ़-पौने दो

सौ का एक टिकट आता है। बहरहाल, जब बाहर ही चलने का मन है तो देर मत कीजिए, चलिए निकल पड़ते हैं। चलो मेंहदीरत्ता।

बिल्कुल ठीक फरमाया आपने, पैसा होना चाहिए। आजकल तो रुपये के सारे खेल हैं जनाब। गरीबों के लिए कोई ठौर नहीं। अब नौकरियों की ही लीजिए। आजकल कहीं भी जाइए, कॉन्ट्रैक्ट बेसिस पर ही नौकरी मिल रही है। हर साल नया एग्रीमेंट और नौकरी का नवीनीकरण। जब तक उनकी मर्जी आपसे काम ले रहे हैं और जब जरूरत नहीं, पिछाड़े लात मारकर निकाल देते हैं। ऐसी नौकरियों में आदमी के अंदर अनिश्चितता की एक आशंका हमेशा घर किये रहती है। कभी भी वे कह सकते हैं कि अपना हिसाब कर लीजिए। कल से और आने की जरूरत नहीं। क्या कहा आपने, सत्ता में तीस साल से सीपीएम पार्टी? आयँ, मजदूरों की पार्टी? आयँ, फिर भी यही दशा? अरे छोड़िए साहब, अब मेरा मुँह मत खुलवाइए। कॉलेज के दिनों में मैंने भी सीपीएम किया है। कार्ड होल्डर था। मुझसे ज्यादा कौन जानता है इन्हें! खैर, अब बताइए कि अचानक नौकरी के छिन जाने पर हम अपने-अपने घरों में क्या कहें! हमारे पिताओं का कहना है कि उनके जमाने में ऐसा नहीं होता था। वे समझते हैं कि हम ही नालायक हैं। अब उन्हें किस तरह समझाएँ कि... क्या कहा आपने? नहीं साहब, यह जेनेरेशन गैप का मामला नहीं है। यहाँ कोई गैप नहीं। बस एक कचोट है कि हम एक अच्छे बेटे नहीं हो सके। नहीं नहीं, मुझे माफ कीजिएगा। बोलने के धाराप्रवाह में मैंने गलत शब्दों का चयन कर लिया। दरअसल हम अच्छे बेटे तो हैं, लेकिन अपने अच्छे होने को किसी तरह साबित नहीं कर सकते। जी नहीं, शादी की नहीं तो अच्छे-बुरे पति होने का मलाल नहीं। लेकिन यह तय है कि हम एक अच्छे पति और बाप भी नहीं हो सकते। हम एक अच्छे प्रेमी भी नहीं। अब आपसे क्या छिपाना - मैं अपनी प्रेमिका, अपनी जान से भी अजीज लिपि तक से झूठ बोलता आया हूँ। हाय हाय, मुझे रोना आ रहा है। मेरी लिपि कितनी भोली है! एक दिन पूछ रही थी कि क्या शादी के बाद हम बिहार घूमने जा सकते हैं! मैंने जब उसे बताया कि मैं छपरा का हूँ तो पूछने लगी कि क्या वहाँ पहाड़ हैं! मैंने उससे मजाक में कहा कि छपरा से निकलकर सोनपुर-हाजीपुर तक पहुँचते न पहुँचते एवरेस्ट की चोटी दिखने लगती है। और देखिए मेरी लिपि का भोलापन कि वह इसे सच मानकर बैठी है अब तक। हाय हाय, बताइए कि जब उसे पता चलेगा कि मेरी नौकरी नहीं रही तो उसके दिल पर क्या बीतेगी! कहेगी शादी कर लो, नौकरी मिल ही जाएगी कभी न कभी। लेकिन आप बताइए कि क्या गारंटी है कि वह नौकरी भी साल-दो साल चल ही जाएगी!

हाँ जी! दुनिया एक रेडीमेड उत्पाद है और मैं कुछ नहीं कर सकता। मेरी उम्र महज पचीस साल है। मैं सिर्फ इश्तेहारों को पढ़ सकता हूँ और लड़कियों के साथ फ्लर्ट कर सकता हूँ। या ज्यादा हुआ तो मल्टीप्लेक्स सिनेमा पर बहस कर सकता हूँ और एड्स की रोकथाम के सामाजिक अभियान में हिस्सेदारी कर सकता हूँ। लोग कहते हैं कि एड्स इस मिलेनियम का सबसे बड़ा संकट है। मिलेनियम मतलब समझे ना? यह ठीक है कि हमें-आपको नौकरी-वेतन-भत्ता की ही चिंताएँ दिखती हैं। लेकिन व्यापक संदर्भों में देखना शुरू कीजिए। एड्स के प्रति मास में जागरूकता लानी चाहिए। मास मतलब समझे ना? हाँ जी! कुछ लोग ये भी कहते हैं कि यह युग चीजों की महाविजय का युग है। आज नहीं तो कल इस जुमले को भी हम ठीक से समझ सकेंगे। कल कामरेड सोम सारस्वत कह रहा था कि हमें किसी को नहीं बख्शना चाहिए। देश को शाहरुख खान और प्रमोद महाजन और आशाराम बापू से बराबर का खतरा है। हाँ जी! लालबिहारी का डेढ़ सौ रुपयों का कर्ज चुकाना है। आखिर कब तक मुफ्त की सिगरेट फूँकते रहेंगे! चाय-नाश्तेवाली का भी पंद्रह सौ हो गया है। उसने तो एक बार टोक भी दिया है। फोन, इलेक्ट्रिक और पानी का बिल मिलाकर हजार का चक्कर अलग से है। साला बाथरूम में नल भी दो दिनों से टपक रहा है। हवाई चप्पल टूट गई है सो घर में भी चमड़े का सैंडल पहिनना पड़ रहा है। एक नई लुंगी भी लेनी है। इन साले क्रिकेटरों को क्या हो गया है! कल ऑस्ट्रेलिया के खिलाफ डेढ़ सौ पर ही लुढ़क गए सब के सब। रानी मुकर्जी की आवाज यार गजब की है। और वो शर्मा की छोटी लड़की रीता, कल देखा था उसे नुक्कड़ पर। यार क्या खूब निकली है। कटार है कटार!

यदि ऐसा होता कि एक दिन तुम्हारी अनुपस्थिति में तुम्हारे घर जाकर मैं छिपकर बैठ रहता टीवी में। चौबीस इंच की टीवी में गुड़ीमुड़ी होकर बैठने में थोड़ी दिक्कत होती। आजकल तो मार्केट में बावन इंच की टीवी भी आ गई है। बहरहाल किसी तरह एडजस्ट कर लेता और दफ्तर से तुम्हारे लौटने का इंतजार करता। नहीं तो तब तक टीवी की भीतरी सुरंगों से होकर जीटीवी या एमटीवी की सैर कर आता। फैशन टीवी की किसी छबीली मॉडल से बतिया रहा होता या स्टार प्लस में किसी सास-बहू के आलीशान बंगले में बैठकर एक प्याली चाय पी रहा होता, तभी दरवाजा खुलने की आवाज होती। तुम घर में प्रवेश करती तो चैनलों की दरार से मैं तुम्हें आता हुआ देखता। तुम्हारे चेहरे की परछाइयों में दिन भर के काम, फिर भीड़ भरी बस की यात्रा में बटोरी गई थकन की चिंदियाँ उड़ रही होतीं। इससे पहले कि तुम भीतर आकर घर की बत्ती जलाओ, मुझसे एक चूक हो जाती है। दरअसल ऐन इसी वक्त स्टार प्लस से भागकर वापस आने और ठीक से बैठने की हड़बड़ी में अनचाहे ही मेरे चश्मे की काँच टूट जाती है और एक चिनकती-सी आवाज से चौंककर तुम टीवी की तरफ देखती हो।

मैं डर जाता हूँ। बहरहाल, तुम बत्ती जलाकर मुख्य दरवाजा बंद कर देती हो और फ्रेश होने के लिए बाथरूम की तरफ चली जाती हो। मैं एक सिगरेट सुलगाता हूँ।

सोचता हूँ कि इस वक्त अपने घर में बैठा मैं क्या कर रहा होऊँगा। दोपहर भर इधर-उधर घूमते रहने के बाद शाम होने से पहले हम मेटियाबुर्ज जाने वाली बस में चढ़े होंगे। मेटियाबुर्ज में कुछ देर टहलने के बाद सूताकल के पास एक दोस्त के यहाँ अड्डा देने गए होंगे। दो घंटे वहाँ बिताने के बाद सीधे एस्प्लेनेड आए होंगे। सिनेमाओं के पोस्टर देखते हुए मेंहदीरत्ता ने कहा होगा कि अब घर लौटने का समय हो गया है। वापस चलते हैं। अब तक मैं घर लौट आया होऊँगा और लिपि को अपनी नौकरी छूट जाने के बारे में बता देने के लिए फोन मिला रहा होऊँगा। पिछली रात ही मैंने तय किया कि अब और यह नाटक नहीं कर सकता। अब जो भी हो देखा जाएगा।

ट्रिंग-ट्रिंग... ट्रिंग-ट्रिंग!

टीवी में छिपकर बैठा मैं लिपि को आवाज देता-देता रुक जाता हूँ। फोन की घंटी बज रही है। जरूर यह मेरा ही फोन होगा। लिपि जानती है कि अक्सर इसी समय मेरा फोन आता है। वह बाथरूम से दौड़कर आती है। मुझे खुशी होती है कि वह मुझसे कितना प्यार करती है।

"हलो? ...हलो?" लिपि की आवाज में घुँघुरुओं की झनक है। थोड़ी देर चुप रहती है। फोन की दूसरी तरफ सन्नाटा था। वह एक बार फिर 'हलो?' कहती है, मानो सन्नाटे को तोल रही हो। फिर निराश होकर रिसीवर रख देती है। यह क्या ड्रामा कर रहा हूँ मैं! यदि फोन किया था तो लिपि से सबकुछ बतला क्यों नहीं दिया? क्यों डरता हूँ? मुझे अपने पर गुस्सा आता है। ...लेकिन यह भी तो हो सकता है कि मैंने अभी फोन किया ही न हो। हो सकता है कि वह लिपि की कोई सहेली हो या सिलीगुड़ी से उसके फौजी पिता, और बीच में ही लाइन कट गई हो। मैं याद करने लगा कि फोन का रिंगटोन लोकल कॉल का था या एसटीडी का। मुझे कुछ याद नहीं आया।

लिपि अब किचन में थी। गैस ओवन पर चाय की पतीली चढ़ाई है उसने। हरे रंग के लो-कट ब्लाउज से उसकी गोरी पीठ दिख रही है - अपने में व्यस्त। किचन में साठ वाट का बल्ब जल रहा है। टीवी में बैठा-बैठा मैं उसकी पीठ पर पीली मैली रोशनी के दहकते स्पॉट देखता हूँ और उदास हो जाता हूँ। मैं मन ही मन दोहराता हूँ कि कैसे अभी फोन बजा था और बाथरूम से निकलकर कैसे वह दौड़ती हुई आई थी! (इस दोहराने में भी मैं तय नहीं कर पाया कि लोकल कॉल था या एसटीडी) दौड़कर आने में उसका आँचल कैसे लहराया था। आँचल के लहराने में कैसी एक बिजली की चमक

थी। मैं मन ही मन दोहराता हूँ, उसकी साँसों में कैसी एक त्वरा थी। उसके होंठों पर कैसी एक हँसी की महीन उजली शर्त थी। अभी-अभी धोए उसके चेहरे में पानी का कितना अवशेष था। पानी में कितनी एक ऊष्मा थी। मैं मन ही मन दोहराता हूँ और उदास हो जाता हूँ।

जिस वक्त तुम चाय पी रही होती हो, मैं मन ही मन तुम्हारे शरीर को दोहराता हूँ। इतने दिनों से देखते-देखते तुम्हारो शरीर को अच्छी तरह से कंठस्थ कर लिया है मैंने। तुम्हारी पीठ में दाईं तरफ ऐन कंधे की ढलान पर जो एक तिल है, मन ही मन उस पर हाथ रखता हूँ। उसे सहलाता हूँ। तुम मेरे इस बचपने पर जोर से हँसती हो। पीठ का दरवाजा खोलकर मैं तुम्हारे शरीर में प्रवेश कर जाता हूँ। तुम मेरा पीछा करते-करते थक जाती हो। तुम्हारी देह की भीतरी दीवारों पर चॉक से अपना नाम लिखता हूँ। देह में एक आरामदायक जगह खोजकर बैठ जाता हूँ। खूब दारू पीता हूँ। चिल्ला-चिल्लाकर गीत गाता हूँ। सो जाता हूँ। तुम मुझे खोजते-खोजते बेहाला चौरस्ता पर मेरे फ्लैट में पहुँच जाती हो। वहाँ बिस्तर पर मेरे पैर पड़े होते हैं। कुर्सी पर स्वेटर पहिने मेरी पीठ सोती हुई मिलती है और अलमारी में पतलून की जेब में दोनों हाथ। इनके अलावा मेरा कुछ भी तुम्हारे हाथ नहीं लगता। अगर तुमने पलंग के नीचे झाँककर देखा होता तो मेरी साबुत उम्र भी तुम्हे मिल जाती।

तुम्हारी देह के कीचड़ में लथपथ मैं किसी तरह तुम्हारे कानों तक पहुँचता हूँ। जोर-जोर से चिल्लाता हूँ, "लिपि, क्या तुम मुझे सुन रही हो? हलो लिपि?"

तुम एक उँगली बाएँ कान से लगाकर दाएँ से ठीक से सुनने का प्रयास करते हुए कहती हो, "हलो? कौन कुणाल? कहाँ से बोल रहे हो? मैं कितनी देर से तुम्हारे फोन का इंतजार कर रही थी। हलो? हाँ जोर से बोलो, कुछ सुनाई नहीं दे रहा। लाइन में कुछ गड़बड़ी लगती है। ...हलो?"